प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय : बिलासपुर

युगल पीठ

कोरम : माननीय श्री एस.आर. नायक, मुख्य न्यायाधीश

माननीय श्री डी.आर. देशमुख, न्यायाधीश

रिट याचिका संख्या 6474 सन् 2005

विचारार्थ प्रस्तुत

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सही/

मुख्य न्यायाधीश

माननीय श्री डी.आर. देशमुख, न्यायाधीश

सही/

दिलीप राव साहेब देशमुख

न्यायाधीश

आदेश की घोषणा हेतु नियत तिथि : 14/02/2006

सही/

मुख्य न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय : बिलासपुर

युगलपीठ

समक्ष : माननीय श्री एस.आर. नायक, मुख्य न्यायाधीश

माननीय श्री डी.आर. देशमुख, न्यायाधीश

रिट याचिका संख्या 6474 /2005

याचिकाकर्ता : श्याम बिहारी त्रिवेदी पुत्र श्री नारायण त्रिवेदी आयु लगभग 55 वर्ष स्थायी निवासी: ग्राम-खपरी, पोस्ट- लाधू व्हाया पथरिया, जिला बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

बनाम

उत्तरवादीगण :

1. छत्तीसगढ़ शासन, कृषि विभाग द्वारा सचिव मंत्रालय, दाउ कल्याण सिंह भवन, रायपुर जिला, रायपुर (छत्तीसगढ़)
2. छत्तीसगढ़ राज्य कृषि विपणन बोर्ड, द्वारा प्रबंध संचालक, पुरानी गंज मंडी परिसर, रायपुर जिला, रायपुर (छत्तीसगढ़)
3. कलेक्टर-पदेन जिला निर्वाचन अधिकारी, जिला रायपुर(छत्तीसगढ़)
4. कलेक्टर-पदेन जिला निर्वाचन अधिकारी, जिला बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

5. कलेक्टर-पदेन जिला निर्वाचन अधिकारी, जिला रायगढ़ (छत्तीसगढ़)

6. कलेक्टर-पदेन जिला निर्वाचन अधिकारी, जिला सरगुजा (अम्बिकापुर) (छ.ग.)

7. कलेक्टर-पदेन जिला निर्वाचन अधिकारी, जिला धमतरी (छत्तीसगढ़)

उपस्थित: माननीय श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता एवं श्री अमृतो दास, विद्वान अधिवक्ता याचिकाकर्ता की ओर से।

माननीय श्री प्रशान्त मिश्रा, विद्वान अपर महाधिवक्ता उत्तरवादी संख्या 01, 03 से 07/ छत्तीसगढ़ राज्य की ओर से।

माननीय श्री प्रमोद वर्मा, वरिष्ठ अधिवक्ता एवं श्री सुमित वर्मा - उत्तरवादी संख्या 02 की ओर से।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

<u>आदेश</u>

<u>(दिनांक 14/02/2006 को पारित)</u>

न्यायालय का निम्नलिखित आदेश माननीय मुख्य न्यायाधीश श्री एस.आर. नायक द्वारा पारित किया गया:

(1) इस जनहित याचिका में, जो जनहित याचिका के रूप में दायर की गई है, यह मांग एवं घोषणा की गई है कि "छत्तीसगढ़ कृषि उपज मंडी अधिनियम, 1972" (संक्षिप्त में "अधिनियम") की धारा 11(1)(ख) के अंतर्गत कृषकों के दस प्रतिनिधियों को मंडी समिति के सदस्य के रूप में निर्वाचित करने

हेतु निर्वाचक मंडल में केवल कृषकों को ही शामिल किया जाना चाहिए, न कि अन्य व्यक्तियों को। याचिकाकर्ता ने इस अधिनियम के किसी भी प्रावधान की संवैधानिक वैधता को चुनौती नहीं दी है। यहां जो तर्क प्रस्तुत किया गया है और जो मांग की गई है, वह यह है कि अधिनियम के उद्देश्यों को प्राप्त किए जाने वाले लक्ष्यों तथा अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के समग्र अध्ययन को ध्यान में रखते हुए, यह उचित एवं न्यायसंगत है कि कृषक प्रतिनिधियों के निर्वाचन हेतु गठित निर्वाचक मंडल में केवल वास्तविक कृषकों को ही शामिल किया जाए। ऐसी व्याख्या अधिनियम के उन सराहनीय उद्देश्यों को आगे बढ़ाएगी, जिन्हें प्राप्त करने के लिए इस अधिनियम को अधिनियमित किया गया था।

(2) याचिकाकर्ता ने बताया है कि वह एक सामाजिक कार्यकर्ता हैं और वर्तमान में "छत्तीसगढ़ स्वर्ण किसान मजदूर संघ" नामक एक स्वैच्छिक संगठन से जुड़े हुए हैं। यद्यपि यह संगठन पंजीकृत नहीं है, फिर भी यह छत्तीसगढ़ राज्य के गरीब किसानों के कल्याण और उत्थान के लिए कार्यरत है। याचिकाकर्ता वर्ष 1985-86 की अवधि में आंचलिक पत्रकार संघ के अध्यक्ष रहे हैं। इसके अलावा, वर्ष 1991-92 के दौरान दुर्ग प्रेस क्लब के सचिव भी रह चुके हैं। याचिकाकर्ता वर्ष 1994 से 1999 तक बिलासपुर ज़िला पंचायत के सदस्य भी रहे हैं। याचिकाकर्ता ने स्पष्ट किया है कि वे न तो स्वयं कृषक हैं, न ही उनके पास कोई कृषि भूमि है, और न ही उनका मंडी समितियों के किसी भी चुनाव में कोई व्यक्तिगत हित है। हालांकि, उन्होंने यह दृढ़ता से बताया है कि वे छत्तीसगढ़ राज्य के वंचित एवं गरीब किसान वर्ग के बेहतर जीवन, उत्थान और विकास के लिए अपनी सेवाएं प्रदान करने के प्रति संकल्पित हैं। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने इस जनहित याचिका को दायर किया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(3) संक्षेप में, याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत मामले का सार इस प्रकार है:

विभाजन से पूर्व अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य (जिसमें वर्तमान छत्तीसगढ़ राज्य का क्षेत्र भी शामिल था) में, 1 नवंबर 2000 से पूर्व, तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य विधानमंडल ने मध्य प्रदेश कृषि उपज मंडी अधिनियम, 1960 (अधिनियम संख्या 19, 1960) को अधिनियमित किया था। इस अधिनियम के लागू रहने के लगभग 12 वर्षों की अवधि में, कृषि उपज मंडी समितियों की संख्या लगभग 80 से बढ़कर लगभग 230 हो गई थी। उक्त अधिनियम को कृषि उपज के बेहतर संगठन, नियमित क्रय-विक्रय तथा कृषि उपज बाजारों की स्थापना एवं प्रशासन के उद्देश्य से लागू किया गया था। वर्षों के

अनुभव के पश्चात यह अनुभव किया गया कि कृषकों एवं व्यापारियों के हितों तथा मंडी समितियों के कुशल संचालन के उद्देश्यों को संतोषजनक ढंग से प्राप्त नहीं किया जा रहा है। इसी के परिणामस्वरूप कृषि उपज मंडी समिति अधिनियम, 1972 (अधिनियम संख्या 24, 1973) को अधिनियमित किया गया। वर्ष 1972 का यह नया अधिनियम मध्य प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के तहत मध्य प्रदेश राज्य के पुनर्गठन तक लागू रहा। मध्य प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2000 में निहित प्रावधानों के आधार पर, वर्ष 1972 का यह अधिनियम छत्तीसगढ़ राज्य में भी प्रभावी और लागू रहा तथा अब इसे छत्तीसगढ़ कृषि उपज मंडी अधिनियम, 1972 के नाम से जाना जाता है। छत्तीसगढ़ राज्य ने 16/12/2000 को जारी अधिसूचना द्वारा, जो 20/12/2000 के छत्तीसगढ़ राजपत्र (असाधारण) के पृष्ठ 78 पर प्रकाशित हुई थी, इस अधिनियम को 01/11/2000 से प्रभावी रूप से अपनाया है, केवल इतने परिवर्तन के साथ कि इसमें 'मध्य प्रदेश' के स्थान पर 'छत्तीसगढ़' नाम प्रतिस्थापित किया गया है। यह अधिनियम छत्तीसगढ़ राज्य में कृषि उपज के क्रय-विक्रय के बेहतर विनियमन तथा कृषि उपज मंडियों की स्थापना एवं उचित प्रशासन हेतु प्रावधान करता है। अधिनियम की योजना से स्पष्ट होता है कि इसके प्रमुख उद्देश्यों में से एक कृषकों को उचित संरक्षण प्रदान करना है। मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ दोनों राज्यों में कृषकों की जनसंख्या अधिक है जो पूर्णतः कृषि कार्यों में संलग्न हैं, तथा ये कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था वाले राज्य हैं। यहां पर कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने पर विशेष जोर दिया जा रहा है और इसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादों की खरीद और बिक्री के उचित विनियमन, कृषि उत्पाद बाजारों की स्थापना एवं प्रशासन तथा यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि किसानों को उनके द्वारा मंडी में बिक्री के लिए लाए गए कृषि उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त हो और वे बिचौलियों द्वारा शोषित न हों, जिस शोषण से इस क्षेत्र के किसान लंबे समय से पीड़ित हैं। ताकि राज्य के कृषकों को मंडी में लाए जाने वाले कृषि उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त हो सके और वे बिचौलियों के शोषण से बच सकें, यह आवश्यक और उचित है कि कृषि उत्पादों की खरीद-बिक्री का उचित विनियमन तथा कृषि उत्पाद बाजारों का समुचित प्रशासन सुनिश्चित किया जाए। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु, यह अधिनियम सम्पूर्ण राज्य में कृषि उपज मंडी समितियों के गठन का प्रावधान करता है। पुनर्गठन के पश्चात्, छत्तीसगढ़ राज्य में, याची के अनुसार कुल 73 कृषि उपज मंडी समितियाँ अस्तित्व में हैं। मंडी समितियों का गठन अधिनियम की धारा 11 के अंतर्गत प्रावधानित है,

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ कृषकों के दस प्रतिनिधियों को समिति के सदस्य के रूप में शामिल किया गया है। अधिनियम का उद्देश्य मंडी समिति में कृषकों के दस प्रतिनिधियों की उपस्थिति सुनिश्चित करना है। यह समिति, जिसे अधिनियम के तहत कर्तव्यों एवं अधिकारों से विभूषित किया गया है, कृषकों के कल्याण संबंधी उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सर्वोत्तम ढंग से कार्य करती है। अतः इस वैधानिक व्यवस्था का लक्ष्य मंडी समितियों में कृषकों का उचित प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना है।

(4) याची द्वारा यह तथ्य प्रस्तुत किया गया है कि हाल के वर्षों में शहरीकरण की तीव्र प्रक्रिया के कारण, शहरों एवं प्रमुख नगरों के आस-पास के विस्तृत कृषि भूमि क्षेत्रों का क्रमिक रूप से गैर कृषि उद्देश्यों, जैसे - आवासीय कॉलोनियों, शहरी/अर्ध-शहरी बाजारों, लघु एवं बृहत् उद्योगों, शैक्षणिक संस्थानों, शहरी क्षेत्रों में उद्यानों आदि के लिए परिवर्तन किया जा रहा है। यह भी बताया गया है कि नगर निगम एवं नगरपालिका सीमाओं के अंतर्गत आने वाले विस्तृत क्षेत्र, यद्यपि ग्रामीण भूमि के रूप में अभिलिखित हैं तथा स्वामियों को भूमिस्वामी के रूप में दर्ज किया गया है, किन्तु वे पूर्णतः शहरी क्षेत्रों में परिवर्तित हो चुके हैं जहाँ कोई कृषि गतिविधियाँ नहीं होती हैं। ऐसे स्वामी/भूमिस्वामी किसी भी प्रकार से कृषि गतिविधियों से संबंधित नहीं हैं और न ही उन्हें कृषक माना जा सकता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(5) याची ने तर्क प्रस्तुत किया है कि अधिनियम के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु तथा कृषकों के हितों की रक्षा एवं सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए, कृषकों के दस प्रतिनिधियों के निर्वाचन हेतु निर्वाचक मंडल में केवल कृषकों को ही शामिल किया जाना चाहिए और किसी अन्य को नहीं। याची के अनुसार, यदि निर्वाचक मंडल में अन्य लोगों को शामिल किया जाता है, तो इससे उस मूल उद्देश्य को ही धक्का पहुंचेगा जिसके लिए यह अधिनियम अधिनियमित किया गया था।

(6) उपरोक्त अभिवचनों के आधार पर, याची ने निम्नलिखित अनुतोष की मांग की है।

7.1 यह प्रार्थना की जाती है कि इस माननीय न्यायालय द्वारा मंडी चुनाव तथा मतदाता सूची के तैयार किए गसे से संबंधित मामले के समस्त अभिलेखों को उत्तिरवादीयों के कब्जे से मंगवाकर इस माननीय न्यायालय के विचारार्थ प्रस्तुत करने की कृपा की जाए।

7.2 यह प्रार्थना की जाती है कि इस माननीय न्यायालय परमादेश जारी कर निर्देशित करने की कृपा करें कि वे इस याचिका में वर्णित विभिन्न मंडियों की मतदाता सूची के संबंध में उचित एवं समुचित जाँच करें तथा यह सुनिश्चित करें कि मतदाता सूची में केवल कृषकों (कृषि योग्य भूमि धारकों) को ही शामिल किया जाए, न कि गैर-कृषकों को।

7.3 यह आगे प्रार्थना की जाती है कि इस माननीय न्यायालय द्वारा संबंधित प्राधिकारियों को यह उचित परमादेश द्वारा निर्देश देने की कृपा की जाए कि वे राज्य में विभिन्न मंडी समितियों के चुनाव कराने के उद्देश्य से, वर्ष 1972 के अधिनियम तथा उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुरूप एक उचित एवं विधिसम्मत मतदाता सूची तैयार करें।

7.4 यह भी प्रार्थना की जाती है कि इस माननीय न्यायालय द्वारा मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, याचिकाकर्ता को कोई अन्य उचित एवं यथोचित अनुतोष, साथ ही याचिका का व्यय भी, प्रदान करने की कृपा की जाए।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(7) राज्य छत्तीसगढ़-प्रतिवादी संख्या 1 तथा प्रतिवादी संख्या 3 से 7, जो रायपुर, बिलासपुर, रायगढ़, सरगुजा एवं धमतरी जिलों के कलेक्टर हैं, ने संयुक्त रूप से लिखित जबाब /आपत्ति दाखिल कर इस याचिका का विरोध किया है।जवाब में यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि चूंकि याचिकाकर्ता ने अधिनियम की धारा 11-ख के उप-धारा (1) की संवैधानिक वैधता को चुनौती नहीं दी है, अतः याचिकाकर्ता द्वारा चाहा गया अनुतोष विधिक रुप से प्रदान नहीं किया जा सकता । तथा, यह भी नहीं कहा जा सकता कि कृषकों के दस प्रतिनिधियों के चुनाव हेतु निर्वाचक मंडल में केवल कृषकों को ही शामिल किया जाना चाहिए। जवाब में यह बिंदु प्रस्तुत किया गया है कि धारा 11-ख के प्रावधानों के अनुसार, अन्य बातों के अतिरिक्त, यह आवश्यक है कि मतदाता का नाम ग्राम भू-अभिलेखों में भूमिस्वामी के रूप में दर्ज होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति जिसका नाम ग्राम भू-अभिलेखों में भूमिस्वामी के रूप में दर्ज है, वह धारा 11-ख (1) के खंड (ख), (ग) और (घ) में वर्णित अन्य योग्यताओं को पूरा करने की शर्त पर कृषकों के दस प्रतिनिधियों के चुनाव में मतदान करने का अधिकारी है।जवाब में यह तथ्य रेखांकित किया गया है कि कृषकों के हितों की सुरक्षा धारा 11-ख(2)(ख) के प्रावधानों द्वारा की गई है,

जो यह निर्धारित करता है कि कृषकों के प्रतिनिधि के रूप में निर्वाचित होने वाला व्यक्ति स्वयं एक कृषक होना चाहिए।

(8) हमने याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव, प्रतिवादी संख्या 1, 3 से 7 के लिए अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री प्रशान्त मिश्रा, तथा प्रतिवादी संख्या 2 के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी.के. वर्मा के तर्कों को सुना है।

(9) याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव ने हमें अधिनियम की धारा 2(ख) में "कृषक" की परिभाषा, धारा 11, 11-बी, 17 एवं 32 के प्रावधानों, धारा 2(जेड-5) में "ग्राम" की परिभाषा तथा छत्तीसगढ़ भू-राजस्व संहिता, 1959 की धारा 158 में "भूमिस्वामी" की परिभाषा से अवगत कराते हुए, अधिनियम के उद्देश्यों को रेखांकित करते हुए यह तर्क प्रस्तुत किया कि इन वैधानिक प्रावधानों का एकमात्र तार्किक व्याख्या यही है कि मंडी समिति के दस प्रतिनिधियों के निर्वाचन हेतु निर्वाचक मंडल में केवल कृषकों को ही मतदाता के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव ने तर्क प्रस्तुत किया कि अधिनियम के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए 'उद्देश्यपूर्ण व्याख्या' के सिद्धांत को लागू किया जाना चाहिए। उन्होंने प्रस्तुत किया कि यदि इस सिद्धांत को लागू किया जाए, जिससे यह निर्धारित करने में कोई कठिनाई नहीं होगी कि मंडी समिति में कृषकों के दस प्रतिनिधियों के निर्वाचन हेतु गठित निर्वाचक मंडल में केवल कृषकों को ही शामिल किया जाना चाहिए और किसी अन्य को नहीं। श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव ने उपरोक्त तर्कों के समर्थन में निम्नलिखित सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों का अवलंब लिया :

करण सिंह एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य[1]

उत्तर प्रदेश भूदान यज्ञ समिति, उ.प्र. बनाम ब्रज किशोर एवं अन्य[2]

माणिक लाल मजूमदार एवं अन्य बनाम गौरांग चंद्र डे एवं अन्य[3]

ब्रिटिश एयरवेज पीएलसी बनाम भारत संघ एवं अन्य[4] **तथा**

दिमाकुची टी एस्टेट के कर्मचारी बनाम दिमाकुची टी एस्टेट प्रबंधन[5]

---
1 ए.आई.आर. 1986 सुप्रीम कोर्ट 1506
2 (1988) 4 एस.सी.सी. 274
3 (2005) 2 एस.सी.सी. 400
4 (2002) 2 एस.सी.सी. 95
5 ए.आई.आर. 1958 सुप्रीम कोर्ट 353

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(10) श्री प्रशांत मिश्रा, विद्वत् अतिरिक्त महाधिवक्ता, राज्य एवं जिला कलेक्टर्स की ओर से पेश होकर, इसके विपरीत यह तर्क देते हैं कि अधिनियम की धारा 11-ख के प्रावधान स्पष्ट, सरल एवं असंदिग्ध हैं तथा विधानमंडल ने जानबूझकर मतदाता और उम्मीदवार के बीच अंतर स्थापित किया है; कृषकों के प्रतिनिधि के रूप में उम्मीदवार का स्वयं कृषक होना आवश्यक है, जबकि कृषक प्रतिनिधि को चुनने वाले मतदाता के लिए कृषक होना अनिवार्य नहीं है। यह पर्याप्त है कि ऐसा व्यक्ति ग्राम भू-अभिलेखों में "भूमिस्वामी" के रूप में दर्ज हो तथा अधिनियम की धारा 11-ख की उप-धारा (1) के खंड (ख), (ग) एवं (घ) में निर्धारित अन्य योग्यताएँ पूरी करता हो। विद्वत् अतिरिक्त महाधिवक्ता का तर्क है कि यदि याची की ओर से पेश विद्वत् वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनींद्र श्रीवास्तव द्वारा सुझाए गए व्याख्या को स्वीकार कर लिया जाए, तो इसका अर्थ यह होगा कि न्यायालय विधिक प्रावधानों में संशोधन कर रहा है, जबकि ऐसी व्याख्या के लिए कोई गुंजाइश ही नहीं है। विद्वत् अतिरिक्त महाधिवक्ता यह भी तर्क देते हैं कि चूंकि याची ने अधिनियम की धारा 11-ख के संवैधानिक वैधता को चुनौती नहीं दी है, अतः रिट याचिका में चाहा गया अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(11) पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के तर्कों को ध्यान से सुनने के पश्चात्, हमारे विचारार्थ एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या याची पक्ष के विद्वत् अधिवक्ता द्वारा सुझाई गई व्याख्या को हमारे द्वारा इस आधार पर स्वीकार किया जा सकता है कि अधिनियम की धारा 11 की उप-धारा (1) के खंड (ख) के अंतर्गत मंडी समितियों में कृषकों के दस प्रतिनिधियों के निर्वाचन हेतु निर्वाचक मंडल केवल कृषक मतदाताओं से ही गठित होना चाहिए, न कि किसी अन्य व्यक्तियों से।

(12) उक्त प्रश्न पर विचार करने से पूर्व, सुसंगत वैधानिक प्रावधानों को दृष्टिगत रखना आवश्यक है। धारा 11 के उप-धारा (1) के अनुसार, एक मंडी समिति में निम्नलिखित सदस्य होंगे: (क) धारा 12 के तहत निर्वाचित अध्यक्ष, (ख) कृषकों के दस प्रतिनिधि, (ग) व्यापारियों का एक प्रतिनिधि, (घ) राज्य विधानसभा तथा लोकसभा का वह सदस्य जिसके निर्वाचविद्वान न क्षेत्र की कम से कम पचास प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती हो, अर्थात् नगर निगम, नगर परिषद या नगर पंचायत की स्थानीय सीमाओं से बाहर, (ङ) मंडी क्षेत्र में कार्यरत सहकारी विपणन समिति का एक प्रतिनिधि,

(च) राज्य सरकार के कृषि विभाग का एक अधिकारी, (छ) विपणन क्षेत्र में कार्यरत वेजमैन (तौलकर्मी) तथा हमालों का एक प्रतिनिधि, (झ) जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक का एक प्रतिनिधि, (ञ) जिला भूमि विकास बैंक का एक प्रतिनिधि, (ट) मंडी क्षेत्र के अधिकार क्षेत्र में आने वाली ग्राम पंचायत या जनपद पंचायत या जिला पंचायत का एक प्रतिनिधि। अधिनियम की धारा 11 की उप-धारा (2) के प्रावधानानुसार, उप-धारा (1) के अंतर्गत समस्त सदस्यों को मतदान का अधिकार प्राप्त होगा, किंतु खंड (च) के अधीन मनोनीत सदस्य एवं खंड (घ) के द्वितीय परंतुक के अंतर्गत विशेष आमंत्रित सदस्यों को यह अधिकार प्राप्त नहीं होगा। धारा 11 की उप-धारा (4) के अनुसार, यदि उप-धारा (1) के खंड (ख) अथवा खंड (ग) के निर्वाचक मंडल द्वारा किसी प्रतिनिधि का निर्वाचन नहीं किया जाता है, तो जिला कलेक्टर द्वारा, यथास्थिति, कृषकों अथवा व्यापारियों का प्रतिनिधि मनोनीत किया जाएगा। अधिनियम की धारा 11-ख की उप-धाराएँ (1) एवं (2) निम्नलिखित रूप में वर्णित है :

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

धारा 11-ख. मत देने के लिए और कृषकों का प्रतिनिधि होने के लिये अर्हताएं (1) प्रत येक ऐसा व्यक्ति :-

(क) जिसका नाम ग्राम के भू अभिलेखों में भूमिस्वामि के रुप में प्रविष्ट है,

(ख) जो मण्डी क्षेत्र में मामुली तौर पर निवास करता है,

(ग) जिसने अठारह वर्ष की आयु पूरी कर ली और

(घ) जिसका नाम इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन तैयार की गई मतदाता सूची में सम्मिलित है ,

कृषकों के प्रतिनिधिा के निर्वाचन में मत देने के लिए पात्र नहीं होगा ।

परन्तु कोई भी व्यक्ति एक से अधिक निर्वाचन क्षेत्रों में मत देने के लिए पात्र होगा ।

स्पष्टीकरण :- शब्द 'भूमि स्वामी ' का वही अर्थ होगा जो कि उसे मध्यप्रदेश भू-राजस व संहिता 1959 (क्रमांक 20 सन् 1959) में दिया गया है।

(2) कोई भी व्यक्ति कृषकों का प्रतिनिधि निर्वाचित किये जाने के लिये तभी अर्हित होगा जबकि -

(क) उसका नाम मंडी क्षेत्र की मतदाता सूची में सम्मिलित है;

(ख) वह कृषक है;

(ग) वह इस प्रकार निर्वाचित किये जाने के लिये अन्यथा निरर्हित नहीं किया गया है ;

(गग) उसके दो से अधिक जीवित संतान नहीं है जिनमें से एक का जन्म 26 जनवरी 2001 को या उसके पश्चात हुआ हो;

परन्तु कृषकों का कोई भी निर्वाचित प्रतिनिधि ऐसा पद धारण करने से निरर्हित हो जाएगा यदि 26 जनवरी 2001 को या उसके पश्चात् एक संतान का जन्म हो जाए जिससे उसकी संतान की संख्या दो से अधिक हो जाती है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

निःसंदेह, जैसा कि श्री मनींद्र श्रीवास्तव द्वारा सही तर्क दिया गया है, अधिनियम की योजना से स्पष्ट होता है कि इसका एक प्रमुख उद्देश्य कृषकों को बिचौलियों द्वारा शोषण से उचित सुरक्षा प्रदान करना है। अतः, हमारे विचार में, विधानमंडल ने कृषकों को प्रतिनिधित्व का एक बड़ा हिस्सा दिया है। न केवल विधानमंडल ने मंडी समितियों में कृषकों के लिए प्रतिनिधित्व का बड़ा हिस्सा आरक्षित किया है, बल्कि यह भी सुनिश्चित किया है कि कृषकों के प्रतिनिधि स्वयं कृषक हों। इन प्रावधानों को अधिनियम की धारा 11 की उप-धारा (1) के खंड (ख) तथा धारा 11-ख की उप-धारा (2) के खंड (ख) में समाविष्ट करके, जिनका उद्देश्य कृषकों के हितों को सुरक्षित करना है, विधानमंडल ने सोद्देश्य रूप से कृषक प्रतिनिधियों के निर्वाचन हेतु मतदाताओं के लिए भिन्न योग्यताएँ निर्धारित की हैं। धारा 11-ख की उप-धारा (1) के अंतर्गत एक मतदाता के लिए कृषक होना अनिवार्य नहीं है। यदि विधानमंडल का आशय यह होता कि श्री मनींद्र श्रीवास्तव के दावे के अनुसार प्रत्येक मतदाता को भी कृषक होना चाहिए, तो हमारे विचार में अधिनियम की धारा 11-ख की उप-धारा (1) में योग्यताएं निर्धारित करते समय यह शर्त समाविष्ट करने में विधानमंडल को कोई कठिनाई नहीं होती कि प्रत्येक मतदाता एक कृषक होना चाहिए। विधायिका ने सुविचारित रूप से एवं साशय उन मतदाताओं, जो निर्वाचकमंडल का अधिनियमित कर सकते हैं, और

उन व्यक्तियों के मध्य, जो कृषकों का प्रतिनिधित्व करने हेतु प्रत्याशी हो सकते हैं, एक सुस्पष्ट विभेद किया है। उपधारा (1) की धारा 11-ख के खंड (क) और उपधारा (2) की धारा 11-ख के खंड (ख) में प्रयुक्त भाषा पूर्णतः स्पष्ट, सरल और असंदिग्ध है तथा एक से अधिक अर्थ या व्याख्या को स्वीकार नहीं करती। यह व्याख्या का सुस्थापित सिद्धांत है कि जब किसी विधान के शब्द स्पष्ट, सरल अथवा असंदिग्ध हों, अर्थात् जब वे केवल एक ही अर्थ के लिए उपयुक्त हों, तो न्यायालयों का कर्तव्य है कि वे परिणामों की परवाह किए बिना उसी अर्थ को प्रभावी करें। **टिंडल, सी.जे. इन ससेक्स पीरेज**[6] मामले में इस प्रकार टिप्पणी की थी :

> "यदि संविधि के शब्द स्वयं स्पष्ट और असंदिग्ध हैं, तो उन शब्दों के प्राकृतिक एवं सामान्य अर्थ को समझाने के अतिरिक्त और कुछ आवश्यक नहीं होता। ऐसे मामलों में, ये शब्द स्वयं ही विधानकर्ता के आशय को सर्वोत्तम रूप से व्यक्त करते हैं।"

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

दूसरे शब्दों में, जब किसी विधि की भाषा स्पष्ट और असंदिग्ध हो तथा केवल एक ही अर्थ ग्रहण करती हो, तो विधि के अर्थान्वयन का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि विधि स्वयं ही अपना अर्थ स्पष्ट कर देती है। ऐसी स्थिति में अर्थ के परिणाम न्यायालय के विचारार्थ नहीं होते, भले ही वे विचित्र या आश्चर्यजनक, अनुचित या अन्यायपूर्ण अथवा दमनकारी ही क्यों न हों।

(13) विस्काउंट सायमंड्स, एल.सी. ने **सम्राट बनाम बेनोरिलाल शर्मा**[7] के मामले में निम्नलिखित टिप्पणी की थी:

> "इस (न्यायिक पीठ) ने बार-बार इस बात पर बल दिया है कि विधिक शब्दों के निर्वचन में हमें न तो सम्मिलित नीति (policy) से संबंध रखना चाहिए, और न ही उन परिणामों से - चाहे वे हानिकारक हों या अन्यथा - जो प्रयुक्त भाषा को प्रभावी करने से उत्पन्न हो सकते हैं।"

---

6 (1844) 11 Cl & F 85, पृ. 143

7 ए.आई.आर. 1945 पी.सी. 48

(14) गजेंद्रगडकर, न्यायमूर्ति ने **कनाईलाल सुर बनाम परमानंदी साधु खान**[8] के मामले में निम्नानुसार अवधारित किया था:

> "यदि प्रयुक्त शब्द केवल एक ही अर्थ को ग्रहण करने में सक्षम हैं, तो न्यायालयों के लिए यह खुला नहीं होगा कि वे किसी अन्य काल्पनिक अर्थ को इस आधार पर अपना लें कि ऐसा अर्थ अधिनियम के कथित उद्देश्य और नीति के साथ अधिक सुसंगत है।"

(15) हालाँकि, श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव का यह तर्क था कि चूँकि अधिनियम की नीति और दर्शन कृषकों के हितों को बिचौलियों द्वारा शोषण से बचाना है, यह आवश्यक है और यह विधायी नीति के अनुरूप होगा कि कृषकों के दस प्रतिनिधियों को चुनने वाला निर्वाचक मंडल केवल कृषकों से ही बने तथा ऐसी व्याख्या विधायी उद्देश्यों एवं नीति को आगे बढ़ाएगी। उनका यह भी तर्क था कि यदि न्यायालय "उद्देश्यपूर्ण अर्थ" के नियम को लागू करे तो ऐसी व्याख्या अनुमेय है। श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव के उपरोक्त तर्कों पर विचार करते समय, न्यायालय को आरंभ में ही स्वयं को यह चेतावनी देनी चाहिए कि वह व्याख्या या निर्वचन के बहाने विधायी कार्य को हड़पने अधिकारी नहीं है। साथ ही, उसे इस खतरे से बचना चाहिए कि किसी धारा के अर्थ का पूर्वनिर्धारण अपनी पूर्वकल्पित धारणाओं के आधार पर न करे, जिसमें व्याख्या की जाने वाली धारा को किसी विचारधारात्मक संरचना या योजना में जबरन ढालने का प्रयास किया जाता हो। जैसा कि बार-बार चेताया गया है, उस विधि से निपटने में यह और भी अधिक आवश्यक हो जाता है जो उन नीतियों को लागू करने के लिए बनाया गया हो जो सार्वजनिक और संसदीय विवाद का विषय रही हों, क्योंकि विवादास्पद मामलों में यह राय अंतर का स्थान होता है कि क्या उचित है, क्या न्यायसंगत है और क्या नैतिक रूप से उचित है - और ऐसी स्थिति में विधि निर्माता की राय ही सर्वोपरि होती है। दूसरे शब्दों में, न्यायालय किसी विधि की व्याख्या अपनी स्वयं की नीतिगत मान्यताओं के आधार पर नहीं कर सकता वह उद्देश्यपूर्ण व्याख्या केवल तभी अपना सकता है जब उसे समग्र रूप से पढ़े गए विधान में अथवा उन सामग्रियों में - जिन्हें व्याख्या के सहायक के रूप में देखने की

---
8 ए.आई.आर. 1957 एस.सी. 907

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

विधि द्वारा अनुमति प्राप्त हो – विधि निर्माता के उद्देश्य या नीति की अभिव्यक्ति स्पष्ट दिखाई दे। अतः जब किसी विधि का उद्देश्य या लक्ष्य वैध स्रोतों से प्राप्त किया जाता है और विधि में प्रयुक्त शब्दों को उस उद्देश्य या लक्ष्य को प्रभावी करने के लिए एक युक्तिसंगत व्याख्या दी जाती है जिसे वे तर्कसंगत रूप से सहन कर सकें, तो न तो कोई कार्य-अतिक्रमण होता है और न ही कोई खतरा उत्पन्न होता है। प्रश्न यह है कि क्या यह उस सिद्धांत को लागू करने का उपयुक्त मामला है जैसा कि श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव द्वारा सुझाया गया है, और क्या यह माना जाए कि कृषकों के 10 प्रतिनिधियों को चुनने के लिए निर्वाचक मंडल में केवल कृषकों को ही शामिल किया जाना चाहिए।

(16) जब किसी संविधि के पद (शब्द) दो या अधिक अर्थ को धारण करने में सक्षम हों, तो ऐसे शब्दों के निर्वचन हेतु सर्वाधिक स्थापित नियम **हेडन के मामले**[9] का नियम है, जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने **कनाईलाल सुर बनाम परमानंदी साधुखा**[10] के वाद में अब एक 'क्लासिक' का दर्जा प्रदान किया है। **एंडरटन बनाम रायन**[11] के मामले में यह अभिनिर्णीत किया गया था कि हेडन का नियम, जिसे 'उद्देश्यपूर्ण अर्थ' या रिष्टि का नियम' के नाम से भी जाना जाता है, किसी अधिनियम के निर्वचन में निम्नलिखित चार बातों पर विचार करने की अनुमति देता है:

(i) अधिनियम बनने से पूर्व विधि क्या थी;

(ii) वह कौन-सा दोष या कमी थी जिसके लिए तत्कालीन विधि में कोई व्यवस्था नहीं थी;

(iii) अधिनियम ने इसका क्या उपचार प्रदान किया है; तथा

(iv) इस उपचार का क्या कारण है।

तत्पश्चात यह नियम निर्देशित करता है कि न्यायालयों को उस निर्वचन को अपनाना चाहिए जो रिष्टि /अनिष्ट का परिहार करे और उपचार को आगे बढ़ाए। इस नियम की व्याख्या **बंगाल इम्यूनिटी कंपनी**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9(1584) को. रिप. 7a, पृ. 7b = 76 ई.आर. 637

10. ए.आई.आर. 1957 एस.सी. 907

11. (1985) 2 ऑल इ.आर. 355

बनाम बिहार राज्य[12] के मामले में मुख्य न्यायाधीश एस.आर. दास द्वारा निम्नलिखित शब्दों में की गई थी:

"यह विधि के अर्थ का एक सुदृढ़ नियम है जो इंग्लैंड में सन् 1584 में हेडन के मामले (उपर्युक्त) के निर्णय के समय से ही दृढ़तापूर्वक स्थापित हो चुका है, कि सभी संविधियों के सही एवं निश्चित निर्वचन हेतु (चाहे वे दंडात्मक हों या लाभप्रद, सामान्य विधि को प्रतिबंधित करने वाली हों या विस्तृत करने वाली) चार बातों को समझना और विचार करना आवश्यक है:

1 अधिनियम बनने से पूर्व सामान्य विधि क्या थी?

2 वह कौन-सा दोष या कमी थी जिसके लिए सामान्य विधि में कोई व्यवस्था नहीं थी?

3 संसद ने राष्ट्रकुल की इस बीमारी के उपचार हेतु क्या उपाय निर्धारित किया है?

4 उपचार का वास्तविक कारण क्या है?

और तब सभी न्यायाधीशों का कर्तव्य यह होता है कि वे ऐसी व्याख्या करें जो कि अनिष्ट को दबाए, उपचार को आगे बढ़ाए, तथा अनिष्ट को जारी रखने के लिए की गई कुटिल युक्तियों और टाल-मटोल को दबाए, और निजी लाभ के लिए किए गए प्रयासों को रोके, तथा अधिनियम के निर्माताओं के वास्तविक आशय के अनुसार, जनहित में, उपचार और निवारण को बल और जीवन प्रदान करे।"

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने बंगाल इम्यूनिटी कंपनी के मामले (उपर्युक्त) में संविधान के अनुच्छेद 286 के अधिनियमित में इस नियम को लागू किया। संविधान से पूर्व प्रांतों में प्रचलित विधि की स्थिति, साथ ही अंतर्राज्यीय व्यापार एवं वाणिज्य में उत्पन्न अराजकता और भ्रम, जो विभिन्न प्रांतीय विधानमंडलों द्वारा कराधान शक्तियों के अंधाधुंध प्रयोग के कारण हुआ था (जो क्षेत्रीय संबंध के सिद्धांत पर आधारित था), का उल्लेख करने के पश्चात्, मुख्य न्यायाधीश एस. आर. दास ने आगे कहा:

"इस बहुविध कराधान (मल्टीपल टैक्सेशन) की अनिष्ट को दूर करने तथा भारत संघ जिसे एक आर्थिक इकाई माना गया है में अंतर्राज्यीय व्यापार या वाणिज्य के स्वतंत्र प्रवाह को, किसी भी प्रांतीय बाधा के

12 ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 661.

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

बिना, बनाए रखने के लिए ही संविधान निर्माताओं ने संविधान में अनुच्छेद 286 को अपनाया था।" सर्वोच्च न्यायालय ने इसी नियम को संविधान के 46 वें संशोधन अधिनियम द्वारा किए गए परिवर्तनों की व्याख्या करते समय एक समान संदर्भ में **गुडइयर इंडिया लिमिटेड बनाम हरियाणा राज्य**[13] के मामले में पुनः लागू किया।

(17) "उद्देश्यपूर्ण अर्थ " (परपज़िव कंस्ट्रक्शन) के नियम के अनुसार, यह माना जाता है कि संसद का यह आशय होता है कि किसी अधिनियम के निर्वचन में न्यायालय, उस अधिनियम के शब्दों द्वारा संकेतित उपाय को आगे बढ़ाकर, जो किसी विशेष अनिष्ट से निपटने के लिए बनाया गया है, तथा उन शब्दों से उत्पन्न होने वाले निहितार्थों को ध्यान में रखते हुए, विधायी उद्देश्य के प्रत्येक पहलू को आगे बढ़ाने का प्रयास करे। ऐसा निर्वचन जो उस उपचार को बढ़ावा देता है, जिसे विधानमंडल ने किसी विशिष्ट कुप्रथा को दूर करने के लिए प्रदान किया है, वही उचित माना जाएगा। फ्रांसिस बेनियन द्वारा लिखित "स्टैच्यूटरी इंटरप्रिटेशन" की धारा 304 में, जो उद्देश्यपूर्ण अर्थ की प्रकृति से संबंधित है, यह कहा गया है:

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "किसी अधिनियम का 'उद्देश्यपूर्ण अर्थ' वह होता है जो विधायी उद्देश्य को प्रभावी बनाता है –
>
> (a) अधिनियम के शाब्दिक अर्थ का पालन करके, जब वह अर्थ विधायी उद्देश्य के अनुरूप हो (इस संहिता में इसे 'उद्देश्यपूर्ण एवं शाब्दिक निर्वचन' कहा गया है), या
>
> (b) एक संकुचित/प्रयासपूर्ण अर्थ लागू करके, जब शाब्दिक अर्थ विधायी उद्देश्य के अनुरूप नहीं होता (इस संहिता में इसे 'उद्देश्यपूर्ण एवं संकुचित अर्थ ' कहा गया है)।"

उसी धारा में आगे यह उल्लेख किया गया है कि :

---

13 एआईआर 1990 एससी 781

जब न्यायाधीश 'उद्देश्यपूर्ण अर्थ की बात करते हैं, तो उनका आशय आम तौर पर उसी निर्वचन से होता है जिसे इस संहिता में 'उद्देश्यपूर्ण एवं संकुचित अर्थ कहा गया है। इस संदर्भ में हम न्यायमूर्ति स्टॉटन के इस कथन को देख सकते हैं कि - 'न्यायालयों के पास अधिनियम के शाब्दिक अर्थ को नज़रअंदाज़ करके उसे एक उद्देश्यपूर्ण अर्थ देने की शक्ति है' (ए-जी ऑफ़ न्यूज़ीलैंड बनाम ऑर्टिज़, (1982) क्यूबी 349)। इसी प्रकार, लॉर्ड डिप्लॉक ने 'विधिक निर्वचन के कार्य के प्रति दो [redacted] प्रतिस्पर्धी दृष्टिकोणों - शाब्दिक दृष्टिकोण और उद्देश्यपूर्ण दृष्टिकोण (purposive approach)' का उल्लेख किया था **(कैमिन्स बॉलरूम्स कं. लि. बनाम ज़ेनिथ इन्वेस्टमेंट्स (टॉर्क्वे) लि., (1971) एसी 850)।**

फिर भी, एक उद्देश्यपूर्ण अर्थ को स्पष्ट रूप से ऐसा निर्वचन होना चाहिए जो सभी मामलों में विधायी आशय को प्रभावी बनाए, चाहे इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए वैधानिक भाषा को संकुचित अर्थ देना पड़े या नहीं। अधिकांश मामलों में, वास्तविक अर्थों में एक उद्देश्यपूर्ण निर्वचन, एक शाब्दिक निर्वचन ही होगा ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

कार्टर बनाम ब्रैडबीर मामले[14] में, लॉर्ड डिप्लॉक ने टिप्पणी की थी कि - 'यदि कोई पिछले 30 वर्षों में सांविधिक अर्थ के प्रश्नों पर हाउस ऑफ लॉर्ड्स के वास्तविक निर्णयों को देखे, तो वह इस प्रवृत्ति के साक्ष्य से अवश्य प्रभावित होगा कि शुद्ध रूप से शाब्दिक अर्थ से हटकर अब वैधानिक प्रावधानों के उद्देश्यपूर्ण अर्थ की ओर झुकाव बढ़ा है। लॉर्ड डिप्लॉक ने इस मामले को इस प्रकार सारांशित किया -

> "----------------मैं उद्देश्यपूर्ण अर्थ को अपनाने में कोई संकोच नहीं करता, जहाँ विधायी भाषा के शाब्दिक अर्थ को लागू करने से ऐसे परिणाम प्राप्त होंगे जो स्पष्ट रूप से अधिनियम के उद्देश्यों को विफल कर देंगे। किंतु ऐसा करते समय, न्यायालय का कार्य एक अर्थ का ही रहता है - यहाँ तक कि तब भी जब इसमें अधिनियम में उन शब्दों को अंतर्निहित करना शामिल हो जो स्पष्ट रूप से इसमें सम्मिलित नहीं किए गए हैं।""कैमिन्स बॉलरूम्स कंपनी लिमिटेड बनाम ज़ेनिथ इन्वेस्टमेंट्स (टॉर्क्वे) लिमिटेड, (1971) एसी

14 (1975) 1 डब्ल्यूएलआर 1204

850 इसका एक उदाहरण प्रस्तुत करता है; किंतु उस मामले में इस पद्धति को न्यायसंगत ठहराने हेतु आवश्यक तीन शर्तें पूर्ण होती थीं:" "प्रथम, अधिनियम के समस्त प्रावधानों के समग्र अर्थ से यह निर्धारित करना संभव था कि वह कौन-सी अनिष्ट /दोष (mischief) था जिसके निवारण हेतु अधिनियम का उद्देश्य निर्धारित किया गया था;" "द्वितीय, यह स्पष्ट था कि मसौदाकार और संसद ने अनभिप्रेत रूप से एक ऐसी संभावना को अनदेखा कर दिया था, और इस प्रकार उससे निपटने में लोप हो गई थी, जिसके समाधान की आवश्यकता थी यदि अधिनियम के उद्देश्य को प्राप्त करना था;" "तृतीय, यह निश्चित रुप से कहना संभव था कि वे कौन से अतिरिक्त शब्द होते जिन्हें मसौदाकार द्वारा जोडा गया होता और संसद द्वारा स्वीकृत किया गया होता, यदि विधेयक के कानून बनने से पहले उनका ध्यान इस लोप की ओर आकर्षित किया गया होता।" "जब तक यह तीसरी शर्त पूरी नहीं होती, अधिनियम में हुई किसी लोप को सुधारने का न्यायालय का कोई भी प्रयास उसके अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के रूप में उचित नहीं ठहराया जा सकता, जिसके तहत वह यह निर्धारित करता है कि संसद द्वारा पारित लिखित कानून का क्या अर्थ है।" **जोंस बनाम वोर्थम पार्क सेटल्ड एस्टेट्स (1980) एसी 74**।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि व्याख्या अंततः या तो शाब्दिक होगी या प्रतिबंधित होगी। एक उद्देश्यपूर्ण अर्थ या तो उद्देश्यपूर्ण-और-शाब्दिक होगा या उद्देश्यपूर्ण और प्रतिबंधित होगा। तीसरा प्रकार का अधिनियमित गैर-उद्देश्यपूर्ण और शाब्दिक होता है। एक अर्थ उद्देश्यपूर्ण और शाब्दिक होता है –

(a) जहाँ शाब्दिक अर्थ स्पष्ट हो और वह उद्देश्य को प्रतिबिंबित करता हो, या

(b) जहाँ शाब्दिक अर्थ व्याकरणिक रूप से अस्पष्ट (ambiguous) हो और उसके संभावित व्याकरणिक अर्थों में से एक उद्देश्य को प्रतिबिंबित करता हो। उद्देश्यपूर्ण-और-शाब्दिक अर्थ सबसे सामान्य प्रकार का अर्थ है, क्योंकि प्रायः शाब्दिक अर्थ और उद्देश्यपूर्ण अर्थ एक ही परिणाम पर पहुँचते हैं। **डिलन एलजे (Dillon LJ) ने आर. बनाम पॉप्लर कोरोनर (R v. Poplar Coroner)**[15] मामले में यह मत

15. (1993)QB610

व्यक्त किया था कि जब उद्देश्यपूर्ण तत्व को शाब्दिक अर्थ से अत्यधिक दूर जाने में बहुत अधिक महत्व दिया जाता है, तो ऐसे अर्थ को 'अति-उद्देश्यपूर्ण' कहा गया है।

{18} न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह विधि-निर्माता (कानून बनाने वाले) द्वारा निर्धारित उद्देश्य को स्वीकार करे, बशर्ते कि वह उद्देश्य संविधान का उल्लंघन न करता हो। यह सिद्धांत तब भी लागू होता है जब न्यायालय को परिणाम अन्यायपूर्ण प्रतीत हो, यदि वह इस बात से संतुष्ट है कि विधि-निर्माता का वास्तविक आशय (real intent) वही परिणाम प्राप्त करने का था। अक्सर यह कहा व दोहराया जाता है कि न्यायालय का कार्य विधायिका द्वारा निर्धारित प्रावधानों का शुद्ध रूप से पालन करना है। व्याख्या के नियम केवल विधायी आशय के बारे में उत्पन्न वास्तविक संदेहों को दूर करने के लिए बनाए गए हैं। अतः, जहाँ विधायी आशय स्पष्ट हो, उसे अमल में लाना ही होगा। फ्रांसिस बेनियन "स्टैच्यूटरी इंटरप्रिटेशन" की धारा 309 में यह अवलोकन किया गया है:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "हमारे आधुनिक संविधान का मूलभूत सिद्धांत है कि न्यायपालिका का संसद के प्रति निष्ठा का कर्तव्य होता है। उनका कार्य संसद द्वारा निर्धारित प्रावधानों का श्रद्धापूर्वक पालन करना है। व्याख्या के लिए विकसित किए गए मानदंड केवल विधायी आशय के बारे में वास्तविक संदेहों को दूर करने के उद्देश्य से बनाए गए हैं। जहाँ विधायी आशय स्पष्ट हो, उसे अनिवार्य रूप से लागू किया जाना चाहिए। स्वाभाविक है कि कोई न्यायाधीश किसी विधायी प्रावधान की नीति को अपनी व्यक्तिगत रुचि के अनुरूप न पा सकता हो। परंतु यह सिद्धांत निर्विवाद है कि निर्णय करते समय उसे ऐसे व्यक्तिगत विचारों को दृढतापूर्वक दरकिनार कर देना चाहिए। जो बात इतनी स्पष्ट नहीं हो सकती, वह यह है कि न्यायाधीश को, एक बार जब वह विधायी आशय के प्रति निश्चित हो जाता है, तो उसे अधिक व्यापक विचारों को भी दरकिनार करना होगा। कोई विधायी प्रावधान न्यायाधीश को किसी भी दृष्टिकोण से अन्यायपूर्ण

प्रतीत हो सकता है। परंतु यह न्यायिक कर्तव्य को प्रभावित नहीं कर सकता। संसद कभी-कभी अन्यायपूर्ण कार्य भी करती है।"

लॉर्ड स्कारमैन ने **ड्यूपोर्ट स्टील्स लिमिटेड बनाम सरस**[16] के मामले में इस स्थिति को सारगर्भित करते हुए कहा:

> संविधि के क्षेत्र में, न्यायाधीश को संसद की इच्छा के प्रति आज्ञाकारी होना चाहिए जैसा कि उसके अधिनियमों में व्यक्त किया गया है। "इस क्षेत्र में संसद कानून बनाती और बदलती है (और) न्यायाधीश का कर्तव्य कानून की व्याख्या करना और उसे लागू करना है, न कि न्यायाधीश की न्याय संबंधी धारणा के अनुरूप इसे बदलना। व्याख्या में, निःसंदेह, व्याख्याकार के लिए एक चयन की शक्ति निहित होती है जहाँ भिन्न-भिन्न अधिनियमित (अर्थ) संभव हैं। परंतु हमारा विधान न्यायाधीश को यह आदेश देता है कि वह उस अर्थ का चयन करे जो उसके विवेक में अधिनियम के विधायी उद्देश्य को सर्वोत्तम ढंग से पूरा करता हो। यदि परिणाम अन्यायपूर्ण किंतु अपरिहार्य हो, तो न्यायाधीश ऐसा कह सकता है और संसद को अपने प्रावधान पर पुनर्विचार करने का आमंत्रण दे सकता है। किंतु उसे संविधि (स्टैच्यूट) को नकारना नहीं चाहिए। अरुचिकर संविधि को केवल इस आधार पर अनदेखा या अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि वह अप्रिय है। केवल तभी जब विधि के विधायी उद्देश्य का उल्लंघन किए बिना एक न्यायसंगत परिणाम प्राप्त किया जा सके, न्यायाधीश उस व्याख्या का चयन कर सकता है जो उसकी न्याय-संबंधी धारणा के अनुरूप सर्वोत्तम हो।

(19) अतः, वर्तमान मामले में, अधिनियम की धारा 11-ख की उप-धारा (1) के खंड (क) तथा उप-धारा (2) के खंड (ख) के स्पष्ट, सीधे और असंदिग्ध प्रावधानों का समुचित ध्यान रखते

---

16 (1980) 1 WLR 142

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

हुए, उद्देश्यपूर्ण एवं शाब्दिक अर्थ के नियम को लागू करना होगा। इस प्रकार लागू करने पर, याची के वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए तर्क को निरस्त करना आवश्यक होगा। स्पष्ट शब्दों में कहें तो, अधिनियम की धारा 11-ख की उप-धारा (1) के प्रावधानों का अर्थ लगाने में उद्देश्यपूर्ण अर्थ के सिद्धांत को लागू करने हेतु कोई संभावना ही नहीं है। यदि न्यायालय याची के विद्वत् अधिवक्ता के अनुरोध को स्वीकार करता, तो यह न्यायालय द्वारा विधि अधिनियमित एवं संशोधन के समान होता, जबकि बंधनकारी न्यायिक प्राधिकारियों द्वारा ऐसी प्रक्रिया निषिद्ध है।

(20) परिणामस्वरूप तथा उपर्युक्त कारणों से हम रिट याचिका को खारिज करते हैं, यद्यपि वाद व्यय पर कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

सही/
मुख्य न्यायाधीश
न्यायाधीश

सही/
दिलीप रावसाहेब देशमुख

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"**अस्वीकरण:** हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । **समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**"

Translated By Yashpal Singh, Adv